International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly
ISSN – 2347-7075
Impact Factor – 5.136
Vol.4 No.6 July - Aug 2017

'अलका सरावगी के 'कोई बात नहीं' उपन्यास में दिव्यांग विमर्श'

Khilare Sindhu Daji
Assistant Professor, Dept. Of Hindi
Uma Mahavidyalaya Pandharpur, Dist- Solapur, 413304(MS)

सारांश :

हिंदी महिला साहित्यकारों में अलका सरावगी का स्थान उच्च कोटि पर है। अलका सरावगी का उपन्यास जगत बहुत रोचक, उद्देश परक है, जो पाठकों को हर समय सोचने पर मजबूर कर देता है। दिव्यांगता और साहित्य का उतना ही घनिष्ठ संबंध है जितना व्यक्ति और समाज। परिवार ही समाज की लघुतम इकाई है। किसी भी व्यक्ति के अस्तित्व के शिकार शिकार का प्रश्न सर्वप्रथम उसके परिवार से जुड़ा होता है। परिवार में रहने वाले प्रत्येक सदस्य की अपनी एक भूमिका होती है, किंतु शारीरिक अक्षमता के कारण किसी व्यक्ति की भूमिका तो उसके अस्तित्व को नकारा जाये तो ऐसे में व्यक्ति कुंठित हो जाता है। हमारा समाज और परिवार दिव्यांग व्यक्तियों के प्रति कितना संवेदनशील है, उनके जीवन को कितना आसान किया है।

मुख्य शब्द : दिव्यांग, संघर्ष, उपेक्षित, दिव्यांगता, अध्ययनशील, विमर्श।

प्रस्तावना :

सामान्य तथा दिव्यांग ऐसी सैनिक एवं मानसिक क्षमता है, जिसके चलते कोई व्यक्ति सामान्य व्यक्तियों की तरह किसी कार्य को करने में अक्षम होता है। समाज इतिहास को देखने से स्पष्ट होता है कि दिव्यांगों की अपनी कोई पहचान नहीं है। निरंतर तथा योग्य कार्य करते रहें समाज में स्थित स्थापित और उनकी सेवा करते रहें और बदले में वे जितना देते हैं, उतने में संतुष्ट रहते हैं। डॉ. के वाजपेई जी ने कहा है "जरा सोचिए जो जन्म से विकलांग है उसका जीवन दर्शन क्या होगा? शायद एक शून्य जिसकी हम आप कल्पना मात्र ही कर सकते हैं उसकी सोच, उसका व्यक्तित्व, बाधाएं तथ्यहीन

दूसरों पर निर्भर जीवन और बहुत बड़ा प्रश्नवाचक चिन्ह जिसका शायद उत्तर शोध पाना वाकई एक चुनौती है।"[1]

उद्देश्य:

1) दिव्यांगों की वर्तमान स्थिति से अवगत करना।

2) समाज की दिव्यांगों के प्रति देखने की मानसिकता को दिखाना।

जन्मजात, प्राकृतिक अथवा अन्य कारणों से शरीर के किसी अंग की अक्षमता वसुत: विकलांगता है। यह एक वैदिक काल में शिक्षा मंत्री घटना है जिसके लिए किसी एक कारण को दोषी ठहराना सरासर नाइंसाफी है। उम्र, जाति, वर्ण, संप्रदाय, वर्ग, धर्म, लिंग सीमा से परे कोई भी इसका शिकार हो सकता है। "दिव्यांगता चाहे शारीरिक हो या मानसिक हो या पूर्ण एक संक्षिप्त स्थिति है जिसे ना चाहते हुए भी व्यक्ति को स्वीकार करना पड़ता है।"[2]

दिव्यांगों के लिए 'दिव्यांग' शब्द का प्रयोग अभी नया है। इसके पूर्व दिव्यांगों के लिए 'विकलांग' शब्द का प्रचलन था। दिव्यांग शब्द प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी द्वारा दीवानों के सम्मान और उनकी विलक्षण प्रतिभा को देखते हुए कार्य किया गया है। माननीय प्रधानमंत्री के अनुसार दिव्यांग व्यक्ति अक्षम होते हुए भी ऐसे विलक्षण काम कर सकते हैं कि उनकी योग्यता और प्रतिभा पर आश्चर्य होता है। ऐसे में शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों के लिए विकलांग के स्थान पर दिव्यांग शब्द का प्रयोग किया जाना चाहिए। किंतु आदर्श और यथार्थ में हमेशा विभेद रहा है। समाज में विकलांगों के लिए अपंग, निशक्त, अंगबाधित आदि शब्द प्रचलित है। भारत के माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने विकलांगता को अभिशाप मानते हुए कहा कि "हम अपनी आंखों से किसी व्यक्ति की विकलांगता को देखते हैं, परंतु उनसे हमारी बातचीत कहती है कि उनमें विशेष क्षमता है। तब मैंने सोचा कि हमारे देश में उनके लिए 'विकलांग' शब्द की जगह 'दिव्यांग' शब्द का इस्तेमाल करना चाहिए।वह व्यक्ति है जो विशेष क्षमता से लैस है।"[3]

समाज और साहित्य आपस में अंतर संबंधित है। साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। समाज की आवश्यकता को साहित्य लिखने के लिए कच्चा माल प्रदान करता है और समाज की प्रभु

प्रगतिशील दुनिया में स्त्री एवं दलित युवक केंद्र में है। सदियों से वंचित, उपेक्षित, वर्ग समाज का अटूट हिस्सा रहा है। फिर भी इसकी अनदेखी होती रही है। जबसे जागरूकता बढ़ी है, समाजवादी चिंतन की ओर जनमानस का रुझान बढ़ा है, तब से वंचित, उपेक्षित वर्ग के साथ लेकर आगे बढ़ना बढ़ने की तलक स्पष्ट देखी जा सकती है। लेकिन समाज का एक विशाल वर्ग भी मौजूद है जिस की उपेक्षा के आरोप से बरी नहीं हो सकता। यह वर्ग है निशक्तों का यानि दिव्यांगों का।

यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि दिव्यांग विमर्श साहित्य की आवश्यकता है। सरकार सुविधाएं प्रदान कर रही है, नियम कानून बना रही है किंतु समाज का मत परिवर्तन साहित्य ही कर सकता है। हमारे समाज का एक हिस्सा दिव्यांगता का देश जल रहा है। इस विशेष वर्ग को हाशिए पर छोड़कर समाज का सर्वांगीण विकास असंभव है। दिव्यांगों के संघर्ष, उनकी समस्याएं, उनके जीवन के साहसी प्रेरक प्रसंग पाठक एवं समाज के सामने प्रस्तुत किया जाए। इससे समाज का विवाह दिव्यांगों के प्रति नकारात्मक रवैया है उसमें बदलाव होगा। हिंदी कथा साहित्य में 3 गांव में का आगमन सर्वोपरि तथा युवा अधिकारी रहा है। साहित्य में नारी कभी मां, कभी बेटी, कभी पत्नी अनंत रूप में प्रकट से विद्यमान है।अलका सरावगी भी इसी तरह की प्रतिभा संपन्न हुई है। हिंदी कथा साहित्य में अलका सरावगी विख्यात साहित्यकार, कथा मर्मज्ञ, कला प्रेमी के रूप में विद्यमान है। उपन्यास और कहानी साहित्य में उनका योगदान रहा है। उन्होंने नए- नए विषयों को साहित्य के माध्यम से समाज के सामने रखने का प्रयास किया है। अलका सरावगी का संपूर्ण कथा लेखन सामाजिक संस्कृति का आदर्श प्रस्तुत करता है। इनकी रचना का मानना है कि भारतीय सेना में मर्यादाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। इनके नारी पात्र कम बोलते हैं, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वह कमजोर है। अलका सरावगी कि नहीं खाए अपने पति को संभालने, परिवार को चलाने और समाज को बढ़ाने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एल्बम भाषा होते हुए भी विसंगतियों से टक्कर लेने के देने में पीछे नहीं रहती। इसलिए इनके नारी पात्र सामाजिक मनुष्य को नया आयाम देते हुए नई चेतना, नई उमंग, नई ऊर्जा और जीवन में कुछ कर गुजरने की आकांक्षा से युक्त है।"[4]

अलका सरावगी द्वारा लिखित 'कोई बात नहीं' उपन्यास की कहानी एक नवयुवक की कहानी है जिसका नाम शशांक है।जो सतरा वर्षीय है। शशांक शारीरिक रुप से अक्षम लड़का है। वह सामान्य बच्चों की तरह चल-फिर, उठ -बैठ नहीं सकता क्योंकि उसे सेरेब्रल पैलेसी, एथिटोयड की समस्या है, जिसमें शरीर का संतुलन अचानक लगे झटके से बिगड़ जाता है। जन्म के समय डॉक्टरों द्वारा देरी से ऑपरेशन करने के कारण उसके दिमाग में ऑक्सीजन की कमी अर्थात एनोक्सिया होने के कारण ही शशांक की ऐसी हालत हुई है। अपने आप को सामान्य बनाने के लिए शशांक हमेशा संघर्षशील रहता है। गार्ड की सीटी के साथ विक्टोरिया मेमोरियल के विशाल मैदान में जगह-जगह कानों के झुरमुटों में घुसे हुए या पेड़ों की आड़ लेकर बैठे प्रेमी - युगल और बेंचों पर बैठे बूढ़े उठकर सामने के द्वार की ओर धीरे-धीरे खिसकते हुए बढ़ रहे थे। शशांक ने सोचा कि यदि वह अभी इसी घड़ी उठकर चलना शुरू करें, तो भी उसकी धीमी चाल के कारण मुख्य द्वार के पास जाते - जाते दूसरी सिटी बज जाएगी। इसी प्रकार शशंका अपने आपको संभालने की कोशिश करता है। शशांक 6 वर्ष की बाल्यकाल से अपने हालात के बारे में सब कुछ जानता है। माता- पिता और परिवारवालों के साथ मिलकर सामान्य बनने के लिए सदैव प्रयत्न करता है।वर्षा के साथ अथक प्रयास और संघर्ष के बाद अब वह थोड़ा सामान्य होता है। अपनी माँ के अथक प्रयास और दृढ़ मनोबल के सहारे अनवरत प्रयास से शशांक अपने पैरों पर खड़ा होना सीखता है, बोलना सीखता है। वह चाहता है कि घर से लेकर स्कूल तक सभी स्थानों पर उसके साथ समानता का व्यवहार किया जाए। उसकी तुलना एक सामान्य बच्चे की योग्यता से की जाए। "मोंटेसरी स्कूल की प्रिंसिपल मिसेज शाह ने उसे भरती करने से यह कहकर माँ को इन्कार कर दिया था कि दूसरे बच्चों के माँ-बाप आपत्ति कर सकते हैं, जैसे कि शशांक को कोई छूत की या फैलनेवाली कोई बीमारी हो।"[5] अपने साथ ऐसा होते देखकर शशांक तिलमिला उठता है।

शशांक एक धीर गंभीर उदास, जिज्ञासु और अध्ययनशील लड़का है। साहित्य से उसे अतिशय लगाव है। फिर भी उसके माता -पिता ने कभी सपने में भी नहीं देखा था कि शशांक को सेट जोसेफ स्कूल में दाखिला हो जाएगा। सेंट जोसेफ स्कूल अपने आप में बेहद, आलीशान, सुप्रसिद्ध और भव्य स्कूल है। ऐसे स्कूल में शशांक जैसे बच्चे के लिए दाखिला पाना किसी से कम नहीं था। शशांक के

परिवार के लिए उसका स्कूल में दाखिला होना खुशी से अधिक राहत लेकर आया था। "क्योंकि अब उन्हें दूसरे लोगों को यह समझाने की जरूरत नहीं थी कि शशांक दिमाग से सही था, यानी कि वह नहीं था जिसे हिंदी में भोला, मंदबुद्धि, अविकसित और अंग्रेजी में रिटाडेड और अब मेंटल चाइल्ड कहा जाता है।"[6] उन सभी लोगों को जवाब मिल गया कि शशांक अपने आप में कितना होनहार है।

क्लास में लड़के जब गर्लफ्रेंड्स की बातें करते, तो शशांक का दिल अंदर ही अंदर डूबने लगता। ऐसे में आर्थर का ही साथ उसे अच्छा लगता है। आर्थर पढ़ाई में फिसड्डी और शरारतों में माहिर था। उसकी शरारतें शिक्षकों को लेकर आपस में किए जानेवाले हँसी - मजाक, चुटकुले इन सब से शशांक का दिल हल्का रहता। आर्थर शिक्षा - दीक्षा, शरीर, पारिवारिक हैसियत से बहुत कमजोर था। ऊपर से बिल्कुल एग्लो इंडियन था। शशांक की माँ और दादी को उससे यह शिकायत होने लगी कि उसने एक ऐसा मित्र चुना है। शशांक सोचता है कि निची हैसियत वाले बच्चों से अपने बच्चों को लोग दूर रखना चाहते हैं। माँ और दादी से बार-बार यह प्रश्न पूछने पर कि उसने आर्थर को मित्र क्यों बनाया? शशांक ने उबालकर कहता है "आर्थर मुझे अपने बराबर एक आदमी तो समझता है। मैं उससे लड़ाई कर सकता हूँ। उसे मार सकता हूँ क्योंकि वह वापस जरूर मारेगा। यों ही छोड़ नहीं देगा।"[7] आर्थर ही है जो शशांक को दिव्यांग न समझकर सामान्य व्यक्ति ही समझता है।

अपने बोलने के ऊपर शशांक काफी दु:खी रहता है । लेकिन उसने परिस्थितियों से हार मानना नहीं सीखा था। कक्षा इलेवन में जब हिंदी के अध्यापक दुबे जी ने कविता पाठ करवायी तो उसमें शशांक ने भी भाग लिया। इस बार वह बिल्कुल हलकाया नहीं। उसने कविता की पहली तीन पंक्तियों को पुनः दोहराया -

"यह क्या है इसे जूते में गडता है
यह कील कहां से रोज निकल आती है
इस दु:ख को रोज समझना क्यों पड़ता है....।"[8]

पूरी कक्षा शांत रुप से शशांक को सुन रही थी। तभी बीमारी के कारण बी बी शब्द पर वह लड़खडा गया। बीच में अटक जाने से वह बेहद दु:खी हुआ क्योंकि वह उसे उस कविता को पूरी कक्षा को

सुनाना चाहता था। लेकिन दुबे जी ने उसे इशारा करके बैठने को कहा। मन मार कर बैठ गया। दुबे जी को शशांक के कविता पाठ करने तथा अच्छी कविता सुनाने पर आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। "उन्होंने कहा चलो तुमने आधी ही सही कम से कम एक अच्छी कविता तो सुनाइ।"[8] उनकी इस वाक्य में व्यंग्य छुपा था। उसे सुनकर शशांक तिलमिला उठता है। वह फिर उठकर कविता की अंतिम पंक्तियाँ सुनाने लगा -

"हम तो सारा का सारा लेंगे जीवन
कम से कम वाली बात ना हमसे कहिए।"[9]

दुबे जी निरुत्तर, निस्तब्ध हो गए थे। तभी घंटी बजी और उन्होंने चैन की सांस ली। उनके जाने के बाद शशांक अपने सहपाठियों की प्रतिक्रिया जानना चाहता था। लेकिन उसके सहपाठियों ने इस घटना को नजरअंदाज किया। किसी ने उसकी तारीफ नहीं की, उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। जो कुछ भी वह क्लास को कहना चाहता था उसने कह दिया।तभी आर्थर 'ओ ग्रेट पोयट' कहकर उसके पास आता है। दोनों आपस में खिलखिला कर बातें करते हैं। शशांक की तबीयत उसे वायरल फीवर होने के बाद प्रतिदिन बिगड़ती चली जाती है। शशांक किस कदर एक सामान्य नवयुवक की तरह विकास कर रहा था। कितनी मेहनत और हिम्मत से उसके माता-पिता ने उसे योग्य बनाया था कि वह अपनी छोटी-छोटी आवश्यकताओं या कामों के लिए कभी किसी पर आश्रित न हो। परंतु विधाता को शायद ऐसा होना मंज़ूर नहीं था। उसकी दयनीय अवस्था को देखकर पूरा परिवार कराह उठता था ओ गाँठ यह कैसा भयानक सपना है, यह खत्म क्यों नहीं होता।

माँ जतीन दा की मदद से शशांक को इन सारी तकलीफों से बाहर निकालने की कोशिश करती है। जितीन दा शशांक को यह बताना चाह रहे थे कि शशांक अपनी तकलीफ, बीमारी और दुर्घटना झेलनेवाले संसार में अकेला इंसान नहीं है। जिंदगी असंख्य लोगों के साथ नाइंसाफी करती है, जहां लोग दु:खद, आधी -अधूरी जिंदगी जी कर चल बसते हैं। शुक्र है यह कि शशांक जीवित है। शशांक सब कुछ मन ही मन मनन करता है। शशांक के मन में कहानी निचोड़ पूरी तरह बैठ जाता है। उस दिन शशांक रात को सोते समय नींद की गोली नहीं खाता। उसकी आंखों में आँसू थे। माँ के पूछने पर शशांक ने बताया कि जिंदगी ने नई टाइटैनिक की कहानी सुनाई। माँ अपनी पहली लड़ाई जीत चुकी है। जो शशांक

पहले अपने आपको संभाल नहीं पा रहा था, अपने पैर जमीन पर नहीं टिक का पा रहा था। अब धीरे-धीरे वह अपने आप को संभाल लगा था। माँ अगले दिन स्कूल जाकर यह खबर लाती है कि शशांक 11वीं से बारहवीं कक्षा में चला गया है। माँ ने फादर से क्या कहा जिससे उसे अगली कक्षा में बैठने की अनुमति बिना परीक्षा पास की ही मिल गई। तो माँ ने फादर से "बस इतना कहा कि एक बार तो उसे तकदीर ने फेल कर दिया है। अब दोबारा आप कर देंगे, तो वह डबल मार हो जाएगी।"[10] सभी परिवार वाले खुश थे। अगली सुबह शशांक स्कूल पहुँचता है। उसका स्वागत करने के लिए फादर हेड मास्टर और स्कूल के एडमिनिस्ट्रेटर मि. डेविड भी मौजूद होते हैं। हेड मास्टर साहब 'वेलकम बॅक' कहते हुए गाड़ी का दरवाजा खोलते हैं। यह चांद उसके विगत और आगामी जीवन को सफल और सार्थक बना देता है । हेड मास्टर साहब की इंसानियत के कारण वह उनके चरणों में गिर जाना चाहता है। क्लास मॉनिटर सुजीत दास उसे एक कार्ड देकर जाता है जिसमें बड़े बड़े अक्षरों में लिखा है - "वी आर विद यू इन सामप्रिय नॉट इन पाटी, हम तुम्हारे साथ हैं, लेकिन दया करते हुए नहीं, नीचे बच्चों के हस्ताक्षर हैं।"[11]

शशांक के पापा अपने बातचीत के दौरान अपने मुंबई वाले मित्र संजय के बेटे का जिक्र करते हैं कि, वह आजकल कॉलेज के बाद पूरा समय संजय के ऑफिस में बिता देता है। वह शशांक का ही हमउम्र का है। एक दिन संजय घर आता है, तो शशांक उसके सामने आने की कोशिश करता है। लेकिन पापा ने उसे जिस टोन में बात की, वे नहीं चाहते वह उनके सामने आए। शशांक पूरा मामला समझ चुका था। उसने क्रोध में आकर कहा -आर यु अशेम्ड आतप मम। उसकी बात सुनकर माँ और पापा सुना हो जाते हैं। पापा घबराकर माँ की ओर देख रहे थे। पापा ने एक लंबी साँस लेकर उसे देखा और अपने हाथों से उसके बालों को सहलाते हुए कहा, तुम मेरे मेरी जान हो। यू आर माय लाइफ। शशांक को पिता का चेहरा देवतुल्य लगने लगता है । उसी स्नेहधारा में बहते हुए शशांक ने पापा की ओर धीरे से देखा कर कहा कोई बात नहीं।

निष्कर्ष : निसंदेह इक्कीसवीं सदी के इस दौर में हम जी रहे हैं, वहाँ जीवन मूल्य बदल रहे हैं। नवीन दृष्टिकोण विकसित हो रहे हैं। आवश्यकता है हमें दिव्यांगों के प्रति रुढिगत मानसिकता को बदलने की। साहित्य, समाज, राजनीति सभी क्षेत्रों में दिव्यांगजन ने सहभागिता की है। हिंदी साहित्य में अलका

सरावगी के साहित्य में दिव्यांग की सुगबुगाहट होने लगी है। अलका जी ने 'कोई बात नहीं' उपन्यास के माध्यम से दिव्यांगों की समस्या एवं संघर्ष को समाज के सामने प्रस्तुत किया है। 'कोई बात नहीं' उपन्यास का प्रमुख पात्र शशांक है। जो गतिहीन एक दिव्यांग लड़का है। उसे शरीर और मन से सशक्त बनाने के लिए उसकी माँ, परिवार के बाहर का व्यक्ति जतीन दा की मदद लेती है। जतीन दा शशांक को पूरे समाज की, उसमें रहनेवाले इंसानों की कथा, कहानी, जीवनी, आप बीती सुनाकर उसकी मानसिक ताकत को बढ़ाते हैं, ताकि वह शारीरिक, मानसिक रुप से विकसित हो। अर्थात अलका जी एक पारिवारिक आपत्ति को सामाजिक आपत्ति के रुप में दिखाकर उसे मनुष्य जाति को सुलझाने के लिए प्रेरित करती हैं।

संदर्भ :

1) निशक्त व्यक्ति(समान, अवसर, अधिकार, संरक्षण ओर भागीदारी अधिनियम 1995

2)वीर बैसवारा, 11 दिसंबर2010,पृ. 4

3)'कोई बात नहीं', अलका सरावगी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,2015 पृ. 10

4) वही, पृ. 90

5) वही, पृ. 21

6) वही, पृ. 61

7) वही, पृ.65

8) वही, पृ. 64

9) वही, पृ.65

10) वही, पृ.70

11) वही, पृ.71